Volume: 5 Issue: 4 Pages: 45-49

सूअरदान उपन्यास में चित्रित जातिवाद की समस्या

*[1] डॉ.राधेश्याम पी.ठाकोर

*[1] निरीक्षक, तपोवन वात्सल्यधाम अंग्रेजी माध्यम स्कूल, अमियापुर, तहसील एवं जिल्लाः गांधीनगर, गुजरात, भारत।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (QJIF): 8.4
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 14/March/2026
Accepted: 11/April/2026

***Corresponding Author**
डॉ.राधेश्याम पी.ठाकोर
निरीक्षक, तपोवन वात्सल्यधाम अंग्रेजी माध्यम स्कूल, अमियापुर, तहसील एवं जिल्लाः गांधीनगर, गुजरात, भारत।

सारांश
सूअरदान' एक व्यंग्यात्मक और यथार्थवादी उपन्यास है, जिसमें भारतीय समाज की जातिगत व्यवस्था, पाखंड और सत्ता के दुरुपयोग पर तीखा प्रहार किया गया है। कहानी का केंद्र एक ऐसे गाँव और उसके आसपास का सामाजिक ढांचा है, जहाँ ऊँच-नीच, छुआछूत और धार्मिक आडंबर गहराई से जड़ें जमाए हुए हैं।उपन्यास में 'सूअरदान' की अवधारणा के माध्यम से यह दिखाया गया है कि किस तरह धर्म और परंपराओं का इस्तेमाल करके गरीब और निम्न वर्ग के लोगों का शोषण किया जाता है। कथानक में विभिन्न पात्रों के जरिए यह उजागर किया गया है कि कैसे उच्च वर्ग अपने स्वार्थ के लिए नियम बनाता और तोड़ता है, जबकि निम्न वर्ग उन नियमों का बोझ उठाने को मजबूर रहता है।लेखक ने व्यंग्य और कटाक्ष के माध्यम से समाज की विडंबनाओं को उजागर किया है। साथ ही, यह उपन्यास मानवीय संवेदनाओं, संघर्ष और बदलाव की आवश्यकता को भी दर्शाता है। 'सूअरदान' केवल एक कहानी नहीं, बल्कि समाज के खोखले मूल्यों और असमानताओं पर गहरी टिप्पणी है, जो पाठक को सोचने पर मजबूर कर देती है।

मुख्य शब्दः 'सूअरदान' उपन्यास में चित्रित जातिवाद की समस्या।

प्रस्तावना:

समकालीन दलित साहित्य में रूपनारायण सोनकर जी एक चर्चित कवि, नाट्यकार, कहानीकार, उपन्यासकार व सफल अभिनेता के रूप में अपनी पहचान बना ली है। सोनकर जी बेहद संवेदनशील, जुझारू और परिश्रमी लेखक हैं। वे दलित समाज और दलित साहित्य के एक गौरवमयी व्यक्ति हैं। उनकी बहुमुखी प्रतिभा और विलक्षण व्यक्तित्त्व ने दलित समाज एवं साहित्य का सिर ऊँचा किया है। दलित साहित्य के अखिल भारतीय स्वरूप में उनकी उपस्थिति बहुत तेजी से बढ़ी है। रूपनारायण सोनकर जी अपनी एक विशिष्ट एवं नयी दलित शैली के लिए प्रसिध्द हैं। हिन्दी दलित साहित्यकारों में खुलकर लिखने का प्रारंभ रूपनारायण सोनकर जी ने किया है। सोनकर जी की अभिव्यक्ति दलितों में नयी चेतना का प्रसार करती है। इनका अनुभव जगत व्यापक है। व्यापक अनुभव जगत में विहार करनेवाला ही व्यापक एवं मूल्यवान साहित्य का निर्माण कर सकता है। इनका रचना संसार अपने आपमें महत्त्व रखता है । साथ-साथ नयी सोच पैदा करता है । समाज में वह प्रभावी बन पड़ता है । इनकी सोच अन्य रचनाकारों से बिलकुल भिन्न और वैज्ञानिक है। वे साहित्य के माध्यम से समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना चाहते हैं।

'सूअरदान' रूपनारायण सोनकर का दूसरा उपन्यास है। इससे पहले लेखक ने दलित जीवन से संबंधित अनेक नाटक, कहानियाँ और डंक नामक उपन्यास हिन्दी जगत को उपलब्ध करवाया है । दलित आत्मकथाओं में 'नागफनी' नामक आत्मकथा भी शामिल है । टी.वी. फिचर फिल्म व नाटक में अभिनेता एवं कलाकार की भूमिका निभाते हैं। वर्तमान में पी.पी.एस. (अलाइड निबंधन) अधिकारी के रूप में कार्यरत हैं। ऐसे बहुआयामी, बहुप्रतिभा संपन्न लेखक ने दलित जीवन की यातना-यंत्रणाओं, उनकी पीड़ा, अपमान, असमानता, आकांक्षाओं, कमजोरियों आदि को देखा-परखा है । अत: यह ठान लिया है कि जब तक इस देश से जातिवाद, असमानता, गरीबी (रोटी, कपड़ा, मकान), आपसी रागद्वेष, रूढि मान्यताओं, अंधविश्वासों, ढकोसलों और गलत दकियानूसी परंपराओं का निर्मूलन नहीं होगी।

असल भारत गाँवों में है । गाँव की उन्नति देश की उन्नति है, देश की उन्नति विश्व की उन्नति है! लोग यदि निर्धन होंगे, अशिक्षित होंगे, नादुरस्त होंगे, मिथ्या परंपरा में माननेवाले होंगे, अंधविश्वासों में विश्वास करते होंगे, तो मानव कल्याण असंभव है। देश में यदि जाति-भेदभाव, ऊँच-नीच, छुआ-छूत होगा तो देश खण्डित होगा।

यदि आज के युग में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को चरितार्थ करना है तो 'सूअरदान' पर दृष्टिपात करना पड़ेगा ऐसा मेरा मानना है। गाँव टूटते जा रहे हैं, शहरों की आबादी बढ़ रही है, झुग्गी-झोपड़ियों में निवास करनेवाले नारकीय जीवन व्यतीत करते हैं। शहरों की सुविधाएँ और चकाचौंध देखकर गाँव से शहर की ओर संक्रमण हो रहा है। ऐसे समय में यदि गाँव को ही विकसित करके लोगों के दु:ख-दर्द को दूर किया जा सकता है। जिन दलितों, पिछड़ों और अल्पसंख्यकों के बुनियादी सवालों को उनकी अन्तर्वेदना को आवाज नहीं मिली, किसी जगह स्थान नहीं दिया गया, ऐसे अति सामान्य लोगों के बारे में लेखक ने संवेदना की ज्योति जलाई है । शहरों के विकास की चर्चा तो हम देखते हैं, परंतु साहित्य में केवल गाँव के प्राण प्रश्नों को लेकर शायद दलित जीवन पर लिखा गया यह पहला उपन्यास होगा।

उपन्यास को लेखक ने दश खंडों में विभाजित किया है। उपन्यास की शुरूआत में लेखक ने कर्म और धर्म को व्याख्यायित किया है। ग्रामीण लोगों की तमाम मुसीबतों का अगर कोई उपाय है तो सूअरफार्म (पिगरीफार्म)। जो मंदिर से चौबीस मीटर की दूरी पर था। इस योजना के कर्ताहर्ता हैं – रामचंद्र त्रिवेदी, सज्जन खटिक, घसीटे चमार और सलवंत यादव । इस पिगरीफार्म के द्वारा गाँवों के नवयुवकों का रोजकार उपलब्ध करवाना, शिक्षित करना, गरेअई दूर करना और हताशावादियों की हताशा दूर करके समाज के मुख्य प्रवाह में लाना उनका उद्देश्य है। समानता, बंधुता, एकता स्थापित करना उनका उद्देश्य है । मानव जाति के लिए जितना कुछ हो सके उसके लिए रहना उसके जीवन का मकसद है। जगह-जगह पर रचनाकार ने यह स्थापित किया है। सूअरफार्म का कार्य चारों पार्टनर अच्छी तरह से करते हैं । देखते ही देखते सूअरफार्म बहुत विख्यात हो जाता है । उनके मालिक धनवान हो जाते हैं और देश की मुसीबतों को दूर करने के लिए यथासंभव प्रयत्न करते हैं। आज के उद्योगपतियों को मानों सलाह दी गई है कि तरक्की या विकास करके अपना तो सब कोई भला करता है। लेकिन यदि दलित, पिछड़ों, अल्पसंख्यकों, निराधार, निराहार, जीव-जंतु खाकर दिन काटने (गिनने) वालों को एक अच्छी जिंदगी दी जा सकती है । इन पार्टनरों के साथ एक मिस हैरी सिल्वा नामक लड़की थी, जो इन लोगों के साथ रहने इंग्लैंड से आयी है। यह लड़की चारों से प्रेम करती है । चारों के साथ विवाह करने के लिए तैयार थी । आधुनिक जमाने में यह कैसे संभव हो सकता है? अर्थात् महाभारत काल के नियम आधुनिक भारत में लागू नहीं हो सकते । भारत देश कुछ मामलों में पुरातनपंथी है, कुछ में प्रगतिवादी । लेखक ने प्रतीकात्मक रूप से पुरानी मान्यताओं पर करारा व्यंग्य किया है । विदेशों में किसान कैसे खेती करते हैं, वहाँ विद्यार्थियों को क्या शिक्षा दी जाती है, यहाँ क्या शिक्षा दी जाती है । इस प्रकार अनेक तर्कों से समझाने की कोशिश की गई है। गाँव में रहने वाले भूमिहीन किसानों की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है – "सबसे ज्यादा परेशानी भूमिहीन मजदूरी करते हैं । शादी, ब्याह, तीज, त्यौहार के लिए वे किसानों के फर्ज पर निर्भर रहते हैं । अब मजदूर बाहर जाकर ईंटों के भट्ठों में काम करते हैं । कुछ मजदूर बड़े-बड़े शहरों में जाते हैं, जहाँ पर चौबीस-चौबीस माले या उससे अधिक माले के अपार्टमेंट बनते हैं । अपनी दयनीय स्थिति में सुधार कर लेते हैं । हवा में तैरते हैं और वायुयान की तरह जमीन पर गिरते भी हैं । अपार्टमेंट का मालिक उनको उचित मुआवजा भी नहीं देता ।" [1]

धरमू पासी और उसकी पत्नी सन्नो जैसे असंख्य मजदूरों को ईंट भट्ठों के ठेकेदार जयंत सिंह जैसे लोग कैसा शोषण करते हैं, उसका मार्मिक चित्रण किया है। मजदूरी कम देना और जेल जैसा वातावरण, खूँखार गुण्डों द्वारा मजदूरों को जबरदस्ती रोक रखना आदि उनका कार्य है। एक दिन यह परिवार भागने की कोशिश करता है परंतु उनको पकड़ किया जाता है । जयंत सिह सन्नो से कहता है – "तु साली। बहुत पटर-पटर बोलती है । चले मेरे कमरे में ।" [2]

"तु मुझे क्या ले जायेगा! तेरे में हिम्मत है । तेरे मूँछें न उखाड़ लूँ तो मेरा नाम सन्नो नहीं ।" "भडुए, तू मुझे क्या बतायेगा ।" [3]

जयंत सिंह सन्नों का हाथ पकड़ लेता है । उसे घसीटता है, परंतु वहाँ उपस्थित किसी में हिम्मत नहीं था कि सन्नो को बचाये । यहाँ दलति नारी के विद्रोही तेअर नजर आ रहे हैं । ईंट के भट्ठों में काम करने वाले मजदूर रोज कमाकर रोज खाने वाले मजदूर थे। न उनके पास खेती थी न व्यवसाय न मकान। ठेकेदार इन गरीब मजदूरों की लड़कियों और स्त्रियों का यौन शोषण करते थे। कुछ मजदूरों के बच्चे पढ़ लिखकर आगे आये हैं, उनमें नौकरी शुदा ऐसे लोग हैं, जो अपने माता-पिता के जीवन में कोई बदलाव नहीं ला पाये हैं। यहाँ बदलते हुए मानवीय मूल्यों को दृष्टिगोचर कर सकते हैं। आधुनिकीकरण-वैश्वीकरण के इस दौर में पढ़े-लिखे नौकरीशुदा लोग परिवार से कटते जा रहे हैं। उनका एक नया समाज बनता जा रहा है।

द्वितीय खंड में सिंहासन खेड़ा पहले कैसा था और अब कैसा है, उसका विधिवत चित्र अंकित किया है । गाँव का प्रधान सत्यनारायण त्रिपाठी, जुनियर हाईस्कूल के प्रधानाचार्य जितेन्द्र यादव, प्राइमरी हेल्प सेन्टर के जोरावर सिंह इन तीनों ने मिलकर गाँव को नष्ट कर दिया है। उनके रहते सिंहासन खेड़ा गुण्डागर्दी, मारकाट और शोषण का पर्याय बन गया। सत्यनारायण त्रिपाठी ने एक दलित लड़की सुनयना को जबरन रखैल बना रखा है । जितेन्द्र यादव ने स्कूल के फर्निचर के पैसे से तीनों के घरों में सोफा लगवा दिया । डॉ. जोरावर सिंह लाखों की दवाईयाँ बेच देता है । शराब के प्याले में मस्त रहता है। सत्यनारायण त्रिपाठी ने असहाय, गरीब और कमजोर समाज की लड़की को जबरदस्ती रखता है –

"ठाकुरों, कुर्मियों – यादवों और तुम्हारी जाति ब्राह्मणों की बहुत लड़कियाँ खुबसुरत है। तुम उनकी तरफ आँख उठाके देखने की हिम्मत नहीं करते हैं। क्योंकि वे त्याग दबंग है । यदि तुम ऐसा करिहौ तो तुमका अपनी जान से हाथ ग्वावय का पड़ी ।" [4]

गाँव में दुराचार, भ्रष्टाचार और गुण्डागर्दी मारकाट होती है । गाँव अब पहले वाले गाँव नहीं रहे। परंतु संकटा प्रसाद चिकवा जो इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. किया था और प्रशासनिक अधिकारी के पद से वी.आर.एस. लेकर गाँव में रहने के लिए आता है। गाँव के षड्यंत्रों का पर्दाफाश करता है। वह प्रधान निर्वाचित होता है। गाँव को शांतिप्रिय और सांस्कृतिक बनाने में उनका बहुत बड़ा हाथ है। खेतीबाड़ी में नवीन पद्धति से विकास करते हैं। गरीबों को बैंक से लोन दिलवाकर उनकी दयनीय स्थिति सुधारने में बहुत बड़ी भूमिका अदा करते हैं । एक अच्छा राजनीतिज्ञ और ईमानदार सेवक चाहे तो लोगों के दु:ख–दर्द दूर हो सकते हैं । उपन्यास में एक लंगड़ा फौजी है । जिसके द्वारा सत्य उजागर होता है –

"गुण्डाराज बन्द । बहिनों की इज्जत लुटना बन्द । त्रिपाठी का मुँह बन्द। गाँव में शराबखोरी बन्द । गाँव में छुआछूत बन्द । वह नाचता है ।" [5]

सरकार के आदेशों का भी वह पालन करवाता है । जरूरत पड़ने पर SC/ST उत्पीड़न एक्ट लागू करने में भी वह पीछे नहीं रहता। सरकार के उपदेशों का पालन करता है। भ्रष्टाचार पूरी तरह दूर करता है । संकटा प्रसाद चिकवा जो एक दलित है । वह कर्तव्यनिष्ठ, ईमानदार और नेक इन्सान है । गाँव की बदसूरती में सुधार लाने का यथासंभव प्रयत्न करता है । पर्यावरण सुधार के लिए भी कार्यरत है । गाँव में रोजगार, विकास करना चाहता है असमानता, भ्रष्टाचार को दूर करने का प्रयास करता है। संकटा प्रसाद वह व्यक्ति है जो विकास पुरुष कहा जा सकता है। लेखक ने संकटा प्रसाद चिकवा के माध्यम से गाँव की दयनीय जिंदगी को कैसे सुधारा जा सकता है उसका बहुत ही अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

गाँवों में दलितों के साथ भेदभाव बरता जाता है । संकटा प्रसाद चिकवा दलित है। अत: इस समस्या को पूरी तरह से हल करने का प्रयत्न करता है। सत्यनारायण त्रिपाठी ग्राम प्रधान थे उस समय और अब संकटा प्रसाद चिकवा के गाँव में बहुत अन्तर है। दलित

महिलाओं द्वारा बनाया खाना उच्चवर्ग के बच्चे नहीं खाते हैं। स्कूलों में बच्चों को अलग बिठाया जाता है । दलित गाँव प्रधान होने के कारण गाँव में मुनादी करवा देते हैं। "स्कूल का भोजन दलित महिला ही बनायेगी। उसको नहीं हटाया जायेगा जो विरोध करेगा उस पर मुकदमा चलाया जायेगा, जिसकी कोई जमानत नहीं होगी ।" [6]

यहाँ ग्राम प्रधान संकटा प्रसाद चिकवा गरीबों का मुक्तिदाता है। लेखक ने दलितों की राजनीतिक हिस्सेदारी और शिक्षा पर ज्यादा जोर दिया है और बिना संघर्ष कुछ होने वाला नहीं है यह प्रतिफलित किया है ऐसा महसूस हो रहा है ।

तृतीय भाग में मिस हैरी सिल्वा दलित मजदूरों, दलित किसानों, पीछड़ों गरीब सवर्णों व अल्प संख्यकों के घर जाकर उनकी समस्याओं को जानने की कोशिश करती है और निश्चित उपाय निकालने में भी अहम भूमिका निभा रही है। गरीब मजदुरों के पास यदि कपड़े नहीं हैं तो उनको कपड़े देती है। अनपढ़ औरतों को पढ़ाया करती थी । जरूरतमंदो की पिगरी फार्म में नौकरी दी जाती थी। पिगरी फार्म एक ऐसी संस्था बन गई है, जो लोगों के तमाम दु:ख-दर्दों को दूर करने का काम करता है । संपत, छक्कन और बक्खन जैसे लोग गोबर से दाने निकालते थे और उनको धुलकर, सुखाकर पिसाते थे फिर उनकी रोटिया बनाकर खाते थे । गरीबी की भी एक हद होती है! सोचनीय मुद्दा यह है कि रामचन्द्र त्रिवेदी, सलवंत यादव, घसीटे चमार और सज्जन खटिक इन लोगों ने मिलकर पिगरी फार्म की स्थापना की। उनका मकसद था मानव धर्म की स्थापना करना । जहाँ अमन-चेन की जिंदगी दलित, पिछड़े, अल्प संख्यक वर्ग के लोग तथा गरीब सवर्णों को प्रदान करना। न जात-पाँत, न ऊँच-नीच न भेद-भाव, न असमानता । यह तथ्य उजागर हुआ कि बिना शिक्षित हुए, बिना आर्थिक रूप से सम्पन्नता प्राप्त किए दलितों-पिछड़ों, अल्प संख्यकों की समस्या का समाधान होने वाला नहीं है । मुझे लगता है अर्थ ही वह ताकत है । जगदीश चन्द्र के 'धरती धन न अपना' उपन्यास में काली के पात्र द्वारा यह बात प्रत्यक्ष रूप से आई थी । काली पचास रूपये का नोट छज्जू शाह को दिखाता है तो वह विस्फारित नजरों से काली की ओर देखता है। परंतु गाँव के दूसरे दलितों की अपेक्षा धन होने के कारण काली के साथ इतना अपमानजनक व्यवहार नहीं होता। परंतु जातिवाद कायम है। गुजरात में माधव सिंह सोलंकी जिस समय मुख्यमंत्री थे उस समय उन्होंने KHAM Theory का आगे बढ़ाने की बात कही थी। अर्थात् K क्षत्रिय, H अर्थात् हरिजन, A अर्थात् अन्य पिछड़ी जातियाँ तथा M अर्थात् मुस्लिम । सुअरदान में लेखक ने किसी एक को नायक न बनाते हुए चार लोगों को प्रतीकात्मक रूप से लिया है। अगर देश में एकता होगी, सभी वर्ग के लोग मिलकर इस समस्या का समाधान करेंगे तो उसमें फल, अच्छे आयेंगे ही ऐसा लेखक को पूर्ण विश्वास है । शर्त केवल यह है जैसा कँवल भारती जी ने अपने लेख में डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर का हवाला देते हुए कहा है कि सत्य को सत्य के रूप में देखना होगा । लेखक ने स्पष्ट किया है कि इस देश की समस्याओं का निराकरण पिगरी फार्म के उद्योगपतियों की तरह नेक, ईमानदार और लोक सेवा करने की मुहिम चलाये या यह समस्या पर गौर करें तो इसका अंत हो सकता है । यथा –

"जो व्यापारी अपनी उन्नति के साथ-साथ गरीबों की उन्नति की चिंता करते हैं, देश को समृद्धशाली बनाने के लिए रात-दिन मेहनत करते हैं। वे व्यापारी और उद्योगपतियों के रहते गरीबी ताण्डव नृत्य नहीं कर सकती है। बल्कि गरीबी देश व समाज से पूँछ दबाकर भाग जाती है । यदि गाँवों, कस्बा, एक-एक जिला, एक-एक प्रदेश से गरीबी दूर करने का बीड़ा उठा ले, तो देश से गरीबी दूर हो जाएगी।" [7]

पुजारी दयाशंकर को 'एड्स' की बिमारी है । अत: उनको छूने के लिए भी लोग तैयार नहीं है । दूसरे लोग जहाँ इनको छूने से भी डरते हैं। छूना भी नहीं चाहते । गाँव से दूर बसाते हैं । उनकी तकलीफ से मुँह मोड़ लेते हैं । परंतु पिगरी फार्म ही उसकी इस बिमारी का इलाज अपने रूपये खर्च करके बिमारी दूर करते हैं । अन्तत: इनका हृदय परिवर्तन होता है । पुजारी दयाशंकर को अहसास हुआ 'एड्स' की बिमारी से । छुआछूत और भेदभाव अपमान क्या होता है । तभी तो उनकी तीनों बेटियों के माध्यम से लेखक ने कहलवाया है –

"आदमी जाति से नहीं बल्कि कर्म से बड़ा होता है। जातिवाद, ऊँच-नीच की भावना समाज में एक कोढ़ की तरह है । यदि इसका इलाज न किया गया तो पूरा समाज रोगी बन जाएगा ।" [8]

एक तरफ मंदिर है। दूसरी तरफ पिगरी फार्म। एक ओर गाय है । दूसरी और सूअर है। ठोस तर्कों से लेखक ने यह प्रस्थापित किया है कि आज के जमाने में केवल धार्मिक अन्धश्रद्धाओं से या भावनाओं में बहने से काम होने वाला नहीं है । पुजारी दया शंकर कहते हैं –

"इन पत्थर की मूर्तियों को जिनको हम देवता कहते हैं । रात दिन इनकी सेवा में लगे रहते हैं, इस विश्वास के साथ ये हमारा कल्याण करेंगी। यह सभी कोरी चीजें हैं । इन्होंने कभी भी किसी मानव का कल्याण नहीं किया है । हमारे संस्कारों को बेवजह इतना धार्मिक बनाकर हमें कर्महीन बना दिया है एवं फिजूल के धार्मिक कर्मकाण्ड में लगा दिया है ।" [9]

इतना ही नहीं वह कहते हैं .....

"आप लोग कुछ भी समझो । मानव से बड़ा कोई नहीं होता है । सज्जन खटिक, घसीटे चमार और सलवंत यादव सही मायने में मानव हैं। रामचन्द्र त्रिवेदी में भी यही गुण है । मानव सेवा के लिए सही तरीके से कमाया गया धन वास्तव में फलदायी होती है । कष्ट हरने वाला होता है । मानव की गरिमा, प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि दिखाने वाला होता है ।" [10]

उसने आगे कहा –

"चारों पार्टनरों को छोड़कर किसी भी ब्राह्मण ने मेरी सहायता नहीं की। मैंने उनके साथ बुरा व्यवहार किया; आप लोगों के भड़काने पर। लेकिन उन्होंने मेरी गलतियों को क्षमा ही नहीं किया बल्कि मरते आदमी का इलाज करा कर जला दिया । पचास लाख रूपये मेरी बिमारी में खर्च कर दिये । ऐसे ही लोगों को महामानव कहा जाता है । जाति-पाँति सभी फिजूल की चीजें हैं । मैं अब अपना सारा जीवन पिगरी-फार्म में लगा दूँगा ।" [11]

उपन्यास में मार्कण्डेय, अग्निहोत्री, कामता प्रसाद, विराट और सीताराम भट्ट जैसे लोग हैं जो धार्मिक मामलों को लेकर सूअरदान को येन केन प्रकारेण बन्द करवाना चाहते हैं । जो मानवता विरोधी है। उपन्यास की शुरूआत में जो कहा कि मिस हैरी सिल्वा सभी चारों..... रामचन्द्र त्रिपाठी, सज्जन खटिक, घसीटे चमार और सलवंत यादव से शादी करने की बात कही भी वह यहाँ सही नहीं बल्कि एक व्यंग्य ही कहा जा सकता है । चारों पिगरी फार्म के मालिक रामचन्द्र त्रिपाठी, मिस हैरी सिल्वा से और दूसरे तीन मालिक पुजारी दयाशंकर की तीनों बेटियों के साथ विवाह करते थे। आम तौर पर भारत में संस्कृत मंत्रोच्चार से शादियाँ होती हैं। यहाँ डॉ. बाबा साहब का संविधान की धाराएँ ही सब कुछ है। जो समानता एवं मौलिक आधार दिलाती हैं।

आज के जमाने में एक तरफ विश्व ग्राम की कल्पना की जा रही है। पिगरी फार्म भी विश्व की सोचता है । दूसरी तरफ आज परिवार टूटते जा रहे हैं । मानवीय संबंधों में दरार आई है। नयी सदी के सपूत अपने-अपने माँ-बाप तक को भूल जाते हैं, यहाँ तक कि तरक्की हमने कर ली है। कौन माँ-बाप, कौन पत्नी, कौन बेटे-बेटियाँ ? इन सबको भूलकर केवल अपना स्वार्थ देखा जाता है। विकास या तरक्की के नाम पर या सभ्यता, संस्कृति के नाम पर छलने में माँ-बाप या परिवार को भी नहीं छोड़ते! इसी प्रकार के एक संवेदनशील प्रसंग का लेखक ने निरूपण किया है । माँ-बाप पाल पोस कर बच्चों को बड़ा करते हैं । कलेजे के टुकड़े के लिए आकाश-पाताल एक कर देते हैं। ऐसे में जब बेटे को नौकरी मिलती है या अफसर बन जाता है, तो परिवार के लिए आशा की किरण निकलती है। यहाँ पर मजदूर सन्तू और उसकी पत्नी, सन्तू का बेटा डिप्टी कलक्टर बन जाता है।

जब परीक्षा हुई थी उस समय माँ-बाप और पत्नी अनेक स्वप्न देखते हैं – माँ मैकी भविष्य की योजनाएँ बनाती है – "हम अपने बबुआ के बँगला मा रहिबे, अच्छा-अच्छा खाना खईबे, अच्छा-अच्छा कपड़ा पहिनब अऊर मोटर मा खूब घूमब ।" [12]

गर्व से सीना फुला जाता है। परंतु शहर जाने के बाद वह रतन लाल एक वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी की बेटी रश्मि सिंह की बेटी से शादी कर लेता है। रश्मि सिंह एम.ए. पास है। शादी करते ही रतनलाल, अपने माता-पिता, पत्नि अनुसुईया और बेटी जानकी को भूल जाता है। माता-पिता ऐसा ही दु:ख भरा जीवन जीते हैं - "हमका जानी कि हमरा बेटवा डिप्टी कलक्टर है। हम जैसेन पहले मजदुरी करत रहैं आज भी मजदुरी करत हैं । हमका वह अपने बँगला नहीं बुलायस। हम का जाने हमार बबुआ डिप्टी कलक्टर है। डिप्टी कलक्टर अइसन होत है का, जो अपने माँ-बाप का दुसरों से मिलावें मा अपन तौहीन समझय। हम मर जाबा लेकिन बहकी शरन न जाव। हम दिन-रात दुसरों के खेतन म काम कीन, वहका समय से पैसा दीन । वह बूढे माँ-बाप को असहाय छोड़ दीनेस । अपनी गऊ समान पत्नी को ठुकरा दीनेस । अपनी बिटिया का छोड़ दीन्होसा वह आदमी थोड़े है । वह तो एक जनावर से ज्यादा गिरा है। जनावर अपने बच्चों को प्यार करत है । हम उसे श्राप देत हैं कि वह कबहूँ खुश न रहे । हम अपनी वसीयत लिखे जात हैं भईया कि वह हमार चिता म आग न दे । हमारा छौटकवा हमारा सारा क्रिया करम करे ।" [13]

माँ-बाप मजदुरी करते हैं । अनुसुइया अपनी बेटी को लेकर मैके गई है। वहाँ मजदूरी करके मेहनत करके पतिव्रता धर्म निभाते हुए जीवन यापन करती है । ठाकुर ने उनके शारीरिक शोषण की माँग की और वह मर गई । बेटी कालगर्ल बन गई।

रतन लाल मजिस्ट्रेट की कुर्सी पर बैठा है । उसी वक्त पाँच कालगर्ल्स को पकड़कर पुलिस न्यायालय में प्रस्तुत करती हैं । जिसमें उनकी बेटी जानकी भी शामिल है । बहुत कहने के बावजूद वह अपने पिता का नाम नहीं बताती, परंतु अंतोगत्वा वह कहती है कि मेरे पिता रतनलाल हैं। अपनी नौकरी बचाने के लिए झूठ बोलता है। परंतु आखिरकार यह तय हो जाता है कि जानकी रतनलाल की बेटी है । अत: एक सरकारी अधिकारी के लिए दो शादी करना अपराध माना जाता है और उसे धारा-498 बी के अनुसार 5 साल की सख्त सजा सुनाई जाती है । उस समय रश्मि सिंह सन्तू के पैर छूती है और रतनलाल प्रायश्चित की मुद्रा में सर झूका लेते हैं।

सजा पूर्ण होने के बाद रतनलाल फिर से समाज सेवा कार्य शुरू करता है और सिंहासन खेड़ा को शिक्षा के क्षेत्र में नक्शा ही बदल दिया।

"बड़ी-बड़ी प्रशासनिक सेवा रूपी सोने की नौकरियाँ फँसकर जिले के गाँवों का उद्धार करने लगी। जब काफी संख्या में छात्र इस संस्थान से छोटी-बड़ी सरकारी नौकरियों में चूने जाते थे। तब वर्ष में एक बार सम्मान व सांस्कृतिक अकादमी, उत्तराखण्ड मारत, देहरादून आयोजित कराती थी । यह प्रोग्राम इसी संस्था के सौजन्य से आयोजित किया जाता था । बड़े-बड़े साहित्यकार, शिक्षाविद्, टी.वी. व प्रिन्ट मीडिया के पत्रकारों को आमंत्रित किया जाता था। इस संस्था के राष्ट्रीय अध्यक्ष सुहैल कुमार की भागीदारी महत्त्वपूर्ण रहती थी। सचिव सुनीता रानी व कोषाध्यक्ष स्वरना जी-जान से समारोह को सफल बनाने में मदद करती थीं ।" [14]

रतनलाल के पिता सन्तू रतनलाल के पूर्व आचरण को माफ कर देते हैं । वह कहते हैं –

"बेटवा हम सब अइसन भँवर म फँस गवन रहे जिससे निकलना बड़ा मुश्किल रहे । छोटा भाई अब जज बन गया है । बेटी जानकी सेल टैक्स में बड़ा अफसर बन गई। अपनी पूर्व जिंदगी में राह भूला व्यक्ति जब दलितों, पिछड़ों, बहुत गरीब सवर्णों व अल्प संख्यकों के बच्चों को पढ़ाने का कार्य करते हैं । आज के समय में बी.ए., एम.ए., बी.एस.सी., एम.एस.सी., बी.कॉम., व एम.कॉम. के छात्रों को अपने कोचिंग इन्स्टीट्यूट में पढ़ाते हैं। पिगरी फार्म के अलावा यह एक महत्त्वपूर्ण पहल जो देश के युवाधन को निराशा में उबार कर बाहर ला सकता है । लेखक रूपनारायण सोनकर जी ने मान ठान ली हो कि जब तक इस देश में लोग शिक्षित नहीं होंगे, संघर्ष नहीं करेंगे तथा समय को जानते हुए गरीबों दलितों, अल्पसंख्यकों के लिए ईमानदार लोग आगे नहीं आयेंगे तब तक इस देश का कल्याण होने वाला नहीं है। उपन्यासकार का मानो एक ही केन्द्र बिन्दु है – असमानता, मान्यताओं को दूर करके एक नये समाज का गठन करना । विश्व ग्राम की कल्पना तभी सफल हो सकती है जब परिवार एक हो। समाज, परिवार तभी एक हो सकता है जब ईमानदारी से तर्क से सत्य का पक्ष लेकर चलनेवाले कुछ लोग हैं । परिवार, समाज, प्रांत, देश तभी तरक्की करता है जब सब मिलकर झूककर नयी विचारधारा को अपनायें । विश्वग्राम की कल्पना तभी साकार हो सकेगी, जब भारत के ग्राफ में एकता, भाईचारा, शिक्षा मानवीय मूल्यों से भरा पड़ा हो। आपसी मतभेद से न गाँव का कल्याण होगा, न देश का ।" [15] यहाँ डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर का वही नारा चरितार्थ होता है । शिक्षित बनो, संगठित बनो और संघर्ष करो । इस मंत्र से आज विकास और प्रगति कर सकते हैं। लोगों की यातना, पीड़ा और वेदनाओं का दूर किया जा सकता है।

सत्यनारायण त्रिपाठी, मार्कण्डेय अग्निहोत्री, कामता प्रसाद बिस्ट और सीता राम भट्ट पिगरी फार्म की प्रगति से भयभीत थे। सत्यनारायण त्रिपाठी जिस समय ग्राम प्रधान थे। उस समय साम, दाम, दण्ड और भेद की नीति से गाँव को पूरी तरह से अपने कब्जे में कर लिया था । गुण्डे पालते थे व अपनी मनमानी करते थे। दलित लड़की सुनयना को जबरदस्ती अपनी रखैल बना रखा था। जिस समय गाँव में संकटा प्रसाद चिकवा ग्राम प्रधान के लिए खड़े होते हैं, तब वह सुनयना के गर्भवती होने का कारण भी संकटा प्रसाद चिकवा जैसे नेक, ईमानदार व्यक्ति पर थोप देते हैं । अमानवीय तरीके से सब कुछ हड़पना चाहते थे। दूसरी ओर पिगरी फार्म को भी नष्ट कर देने में पीछे नहीं हटते। उपन्यास में लेखक ने दो तरह के समाजों का निरूपण किया है। अंधविश्वास और अंधविश्वासों से मुक्त। अंधविश्वासी समाज में रामनारायण त्रिपाठी आदि चार। उन्होंने सुअरों की चोरी की । पिगरी फार्म के नजदीक गौशाला बनाई । परंतु उसमें वे असफल रहे । केवल और केवल लोगों को भावनाओं में बहाकर उससे काम नहीं करा सकते । उनको रोटी चाहिए नया जीवन जीने की उम्मीद चाहिए। सही क्या है गलत क्या उसकी समझ इन दलितों-पिछड़ों में आ गई है । लेखक ने यह भी बताया है कि दलित वर्ग के लोग अशिक्षित होने के कारण नये विचारों का स्वागत करने से भी कतराते हैं । अपना भला कहाँ है वह यह भी नहीं सोचते । दलितों को ब्राह्मणवादी मानसिकता से बाहर आना होगा । मिथ्या आडंबरों का त्याग करना होगा । प्रतिकात्मक रूप से लेखक ने यह बताया है कि रामनारायण त्रिपाठी का चेहरा कुरूप है । अन्दर से भी बाहर से भी, उसको पहचानना होगा।

पिगरी फार्म राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिए कार्य करता है । उनका मिशन है –

गाँवों में पूर्णत: जातिवाद, छुआछूत मिटाना अन्तर्जातिय विवाह करवाना, स्कूल, कॉलेज व औषधालय खोलना आदि...। गाँवों की दूरव्यवस्था दूर करके आदर्श गाँव की स्थापना करना उनका लक्ष्य है। सभी क्षेत्रों में बदलाव जहाँ जरूरत है । मानव का अस्तित्व तभी रहेगा, जब आनेवाली भविष्यगत संभावनाओं से परिचित होंगे और उससे बचने का उपाय करेंगे। आज बेटी बचाओ और दलित आंदोलन चल रहा है । ग्लोबल वार्मिंग, पर्यावरण का खतरा मंडरा रहा है। एक तरफ नक्सलवाद, माओवाद, आतंक, भ्रष्टाचार फैला हुआ है। जातिवाद, प्रांतवाद, राष्ट्रों के आंतरिक कलह में मनुष्य जाति को बचाना है तो हमें कड़ा संघर्ष करना पड़ेगा। लेखक ने सत्यनारायण त्रिपाठी का हृदय परिवर्तन कराया है । गरीबी के कारण अपने चेहरे की प्लास्टिक सर्जरी करवाने की पूरी जिम्मेदारी पिगरी फार्म के मालिक उठाते हैं । उनकी शर्त यह थी –

"आप दलित-पिछड़ी अल्प संख्यकों और गरीब सवर्णों की औरतों पर अत्याचार नहीं करेंगे। आप मानव को मानव समझेंगे। आप पाखण्डी व अंधधर्म के लिए लोगों मानने को बाध्य नहीं करेंगे। मानवता के प्रति जिन महापुरूषों ने कार्य किए हैं उनको अपमानित नहीं करेंगे ।" [16]

हताशावादियों की दयनीय स्थिति का निवारण किया गया है । सज्जन खटीक एक स्थान पर कहते हैं –

"ये हताशावादी समाज के दुश्मन नहीं है, बल्कि हम उनके दुश्मन है। हमने जमीन-जायदाद, कल कारखानों, उद्योग-व्यापार, शिक्षा, प्रशासन राजनीति, पुलिस और विज्ञान सभी जगह कब्जा कर रखा है। सरकारी और गैर-सरकारी नौकरियों में हम सभी लोग दिखाई पड़ते हैं । 'हताशावादियों' का इन पर कोई अधिकार नहीं है । उनके बच्चे एक-एक रोटी के लिए मोहताज हैं। उनकी लड़कियों और स्त्रियों को तन ढँकने के लिए एक भी कपड़ा नहीं है । रहने के लिए झोंपड़ी तक नहीं है ।" [17]

'हताशावादियों' शब्द शायद नक्सलवादियों के लिए प्रयुक्त हुआ है। महाश्वेता देवी के 'अग्निगर्भ' उपन्यास में भी कहे जानेवाले नक्सलवादियों की दयनीय स्थिति का आलेखन हुआ है । वहाँ लघुत्तम वेतन अर्थात् "जीवन जीने लायक मजदूरी" लोगों को नहीं मिलती। एक तरफ अकूट सम्पत्ति है, दूसरी तरफ जीवन जीने के लिए क्या कुछ नहीं करना पड़ता है । यहाँ लेखक ने रास्ता निकाला है । सज्जन खटीक कहते हैं –

"इस जिले के प्रथम श्रेणी के उद्योगपतियो को हताशावादियों के प्रत्येक परिवार के एक-एक पक्का घर बनवा कर देना होगा । इस जिले के द्वितीय श्रेणी के उद्योगपतियों को हताशावादियों के प्रत्येक परिवार को तैंतीस-तैंतीस किलो गेहूँ और चावल प्रत्येक माह नि:शुल्क वितरित करना होगा । आदमियों, औरतों और उनके बच्चों को प्रत्येक छ: माह में कपड़े बनवाकर देना होगा। तृतीय श्रेणी के उद्योगपतियों को हताशावादियों की लड़कियों की शादी नि:शुल्क करानी होगी । सभी श्रेणी के उद्योगपति व व्यापारी हताशावादियों के क्षेत्र में स्कूल, कॉलेज, औषधायल खोलेंगे। सभी उद्योगपति व व्यापारी अपने-अपने व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में हताशावादियों के बच्चों को नौकरी देंगे व समस्त उपर्युक्त हैसियत वाले उद्योगप्ति प्रत्येक गरीब परिवार को छ:-छ: एकड़ जमीन खरीदकर देंगे । जिले के प्रत्येक सरकारी कर्मचारी व अधिकारी अपनी जिम्मेदारी निभाये तो आसानी से समस्या का समाधान निकल सकता है । वे लोग अपने बजट में थोड़ी कटौती करके हताशावादियों के लिए त्याग करें। कर्मचारी अपनी तनख्वाह में से दो प्रतिशत माह व अधिकारी पाँच प्रतिशत माह स्वेच्छा से दें । जब देश में युद्ध छीड़ जाता है, तब भी कर्मचारी व अधिकारियों के वेतन से कुछ भाग युद्ध के लिए कटौती की जाती है । मेरा दावा है कि ऐसा करने से देश में शांति आयेगी। सभी नागरिकों के जानमाल की रक्षा होगी ।" [18]

काल्पनिक स्वर्ग लोग, मिथ्या परंपराओं की धज्जियाँ उड़ाई है । कँवल भारती के शब्दों में देखिए –

"गौ और सुअर ये दो पशु हैं, दोनों पाले जाते हैं और दोनों ही आर्थिक लाभ देते हैं । पर हिन्दू संस्कृति ने गौ का सम्बन्ध ब्राह्मण से जोड़ दिया है और सुअर को दलितों से । क्या इसे किसी भी तरह से उचित कहा जा सकता है? गाय किसे दान की जाती है ब्राह्मण को? किस उद्देश्य के लिए? उत्तर है, दु:खों की वैतरणी पार करने के लिए । यह एक ऐसा मिथक है, जिसका कोई तार्किक आधार समझ में नहीं आता। हिन्दू समाज में गौ से जितनी धारणाएँ हैं। सब मिथक हैं । मिथक को तोड़ने का ख्याल सोनकर को आया। सोनकर को छोड़कर किसी अन्य रचनात्मक लेखक को मिथक तोड़ने का ख्याल नहीं आया। गोदान के लिए सुअरदान की कल्पना भी सोनकर की अपनी कल्पना है और बड़ी मौलिक कल्पना है। यदि गौदान एक मिथक है, तो सुअरदान भी मिथक है। लोहे को लोहा काटता है, इस ख्याल के साथ सोनकर ने सुअरदान का मिथक गढ़ा लेकिन सोनकर ने इसे सिर्फ मिथक नहीं रहने दिया है, बल्कि उसे हकीकतत में भी मूर्तरूप दे दिया है ।" [19]

सन्दर्भ सूची:

1. सूअरदान (उपन्यास), रूपनारायण सोनकर, पृ. – 24
2. वही, पृ. – 25
3. वही, पृ. – 25
4. वही, पृ. – 31
5. वही, पृ. – 45
6. वही, पृ. – 49
7. वही, पृ. – 67
8. वही, पृ. – 83
9. वही, पृ. – 83
10. वही, पृ. – 83
11. वही, पृ. – 84
12. वही, पृ. – 101
13. वही, पृ. – 110
14. वही, पृ. – 129
15. वही, पृ. – 129
16. वही, पृ. – 143
17. वही, पृ. – 152
18. वही, पृ. – 157
19. नागफनी पत्रिका, सं. – सपना सोनकर, पृ. 48